Chapter-3

तृतीय अध्याय

कुमाऊँ का लोक जीवन

तृतीय अध्याय

कुमाऊँ का लोग जीवन

(१) सामाजिक स्थिति :

कुमाऊँ के समाज में नये युग तथा पुराने युग की सामाजिक स्थिति का मिश्रण देखने को मिलता है।

यहाँ का विस्तार ११वीं तथा १२वीं सदी के बाद हुआ। यहाँ पर वैश्य जाति नहीं है, परन्तु अब बहुत से वैश्य विभिन्न प्रदेशों से आकर यहाँ बस गये हैं। ११वीं, १२वीं सदी से पहले कोल, किरात, एवं खश जैसी जातियों का बोलबाला था। यहाँ के समाज में ब्राह्मण, शुद्र, क्षत्रिय और जनजातिय लोग रहते हैं।

ब्राह्मणों ने यहाँ पर अपना वर्चस्व बनाये रखा है, उनको चंद वंश एवं पवार वंश ने भी बहुत सहयोग किया। इन वंशों ने भी कत्पूरी वंश का अंत करके अपना शासन किया। यह तीनों ब्राह्मण, क्षत्रिय, चंद, पवार वंश उत्तरांचल के बाहर के हैं, इन वंशो को अपना राज्य स्थापित करने के लिए नवागंतुक की आवश्यकता थी, इसलिए इन्होंने इनको सहयोग दिया, इन लोगों में शिक्षित, सभ्य जातियाँ थी, जबकि पहले बसे लोग शांति प्रिय एवं सरल थे।

नये वंशों में से इन नवागंतुकों को कई भूमियाँ दान की। कुछ समय तक पूर्व के तथा नवागंतुक लोगों में भेदभाव रहा। परन्तु वक्त के साथ अब पहचान पाना कठिन है। यह नई जातियाँ १८ – १९वीं सदी तक यहाँ पर बसती रही।

नवागंतुकों ने पूर्व के लोगों से विकास अच्छा किया तथा उनकी आर्थिक स्थिति भी अच्छी है। कुछ – कुछ भेदभाव असमानता अभी भी देखी जा सकती है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि ब्राह्मण लोगों को सभी शासकों ने उच्च स्थान दिया। राजदरबार में भी वह राज पुरोहित, सैन्य अधिकारी तथा ज्योतिषी के उच्च पद पर विद्यमान थे। कुछ ब्राह्मण अभी भी खेती तथा पशुपालन का व्यवसाय करते हैं। कुछ पशुपालन खेती को करते हैं। मगर कारीगरों को लगाकर करते हैं। मुख्य व्यवसाय उनका ज्योतिषी ही है।

ब्राह्मण जाति के मनुष्य केवल ब्राह्मण जाति में ही विवाह करते है। परन्तु अब नये शिक्षित वर्ग यदि किसी और भाषा के ब्राह्मण जाति में भी विवाह करते देखे गये हैं। कुछ ही ब्राह्मण जातियाँ ऐसी हैं जो शहरों में बसने के कारण किसी अन्य जाति वैश्य या क्षत्रिय में भी विवाह करने लगे हैं, परन्तु आज भी ब्राह्मण जाति की कट्टर वादिता देखने को मिलती है, खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में तो कट्टरवादित जस की तस है।

ब्राह्मण वर्ग के व्यक्ति आज भी कुवाँरी कन्या के हाथ का भोजन ग्रहण नहीं करते हैं और बिना सिले कपड़े पहनकर स्त्रियाँ पुरुष खाना बनाती तथा खाती हैं, वह चावल किसी के हाथ का नहीं खाती, पर रोटी कोई भी बना सकता है, घर में उच्च स्थान की स्त्री ही खाना बनाती है।

क्षत्रियों का स्थान दूसरा कहा जा सकता है। सामाजिक स्थिति में इनका भी महत्व था। इसमें दो प्रकार की है – खश तथा राजपूत।

खश वह है जो पौराणिक काल से यहाँ निवास करते है। तथा राजूपत उत्तराँचल के बाहर से आकर बसे हैं। खश खेती – बाड़ी (कृषि) का काम करते हैं तथा राजूपत युद्ध जीवि जातियाँ थीं, परन्तु अब युद्ध ना होने से इन्होंने भी कृषि को अपना लिया है। पूर्वकाल में राजपूतों को उच्च सैनिक पद मिले थे तथा जागीरें देते थे।

पहले राजपूत खश जाति की कन्याओं से विवाह तो कर लेते थे परन्तु अपनी कन्या को नहीं देते थे। मगर अब दोनों जातियाँ इनती मिश्रित हो चुकीं है कि दोनों में अन्तर कर पाना मुश्किल है।

शुद्र यहाँ के मूल निवासी माने जाते हैं। सबसे ज्यादा अत्याचार से पीड़ित शुद्र जाति हुई है। किरात तथा खशों ने इनको पराजित करके उनका शोषण किया तथा अपना दास बनाकर रखा। तब से आज तक इनको ऐसी ही आदत बनी है। कि यह अपनी जाति से भिन्न जाति वालों को एक राजा की तरह मानते हैं।

शुद्रों की भी अनेक उपजातियाँ है। टमटा, ओड़ (मिस्त्री) पहरी, आगरी, चमार, मोच, हनकिया (कुम्हार) वादी, दुड़किया, दर्जी, ढ़ोली, भौड़, हलिया, इत्यादि होते हैं, यह भी आपस में भेदभाव रखते हैं। ब्राह्मण जाति इनको स्पर्श नहीं करती है। गांधीजी ने २०वीं सदी के प्रारम्भ में अछूतो के उद्धार के लिए जो आन्दोलन चलाया तब से इनकी स्थिति में थोड़ा सुधार हुआ है। यह शिक्षित हुए तथा आर्थिक, राजनैतिक स्थिति में भी सुधार हुआ खान – पान में भेदभाव कम हुआ है। कृषि का अभाव होने के कारण इनकी पुरानी प्रथा तथा गाँवों में आजकल भी लगभग यही देखा जा सकता है। परन्तु शिक्षित वर्ग के लोग अब इतना नहीं मानते है वह पुराने रीति रिवाजों को ज्यादा महत्व नहीं देते है। तथा उनका आत्मविश्वास आज बढ़ा है, क्योंकि शहरों में वह भी उच्च पदों पर कार्यरत हैं। कुमाऊँ में कुछ जनजातियाँ भी निवास करती है। उसमें शाह, चौधरी, वर्मा, गिरि, पुरी, गोस्वामी, नाथ, भारती आदि हैं, तथा इन जाति के लोगों को शुद्रों से उच्च स्थान प्राप्त है।

अनेक आदिवासी जातियाँ भी यहाँ रहती हैं, जैसे भोटिया, थारु, बुक्सा, जौनसारी, राजी आदि।

(२) धार्मिक स्थिति :

भारत एक विशाल देश होने के कारण यहाँ पर अनेक धर्म – जाति के लोग निवास करते हैं। यहाँ के हर प्रान्त के हर धर्म – जाति के लोग तथा हर धर्म को मानने वाले लोग मिल जाते हैं। किसी भी राज्य तथा प्रदेश में लोग विविध – विविध कार्य हेतु निवास करते हैं तथा इस प्रकार सभी धर्म के लोग हर प्रान्त में निवास करते हैं। कुमाऊँ में भी ऐसा ही हुआ समय – समय पर विविध धर्म – जाति के लोगों ने यहाँ बसेरा किया और यहीं के होकर रह गए उनमें मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, ब्राह्मण तथा बौद्ध धर्म के लोग हैं, परन्तु इनकी मात्रा कम है। सबसे प्राचीन धर्म ब्राह्मण धर्म है। इस धर्म के यहाँ पर बहुत व्यक्ति तथा माननेवाले मिल जायेंगे। इनका एक प्रकार से यहाँ प्रभुत्व है। यहाँ पर अनेक देवी देवताओं के मंदिर है तथा यहाँ अनेक ऋषियों के आश्रम भी हैं। कुछ वर्तमान में आकर यहाँ बसे हैं, जो शिव भगवान के उपासक हैं, लोग आज भी उन्हें वही सम्मान देते हैं, जो पहले ऋषियों को दिया जाता था। यहाँ पर लोगों में भक्ति – भावना कूट – कूटकर भरी हुई है। यहाँ पर अनेक मंदिर तथा पवित्र स्थान हैं, जहाँ पर आज भी नियमित रुप से पूजा होती है, तथा भक्ति होती है। यहाँ प्राचीन समय में अनेक ग्रंथो की रचना हुई थी। आज के समय में भी लोग दूर – दूर से यहाँ के पवित्र स्थानों, नदियों तथा मंदिरों के दर्शन करने आते हैं तथा ब्राह्मण ही यहाँ के मंदिरों का कार्यभार संभालते हैं। सबसे अधिक प्रचार यहाँ पर शैव सम्प्रदाय का है। यहाँ पर शिव को कई नामों से पूजा जाता है। वह उनके अवतार माने जाते हैं। जैसे भ्वालनाथ, भोलानाथ नाम एक देवता को महादेव का अंश तथा उनकी पत्नी वर्मी को शक्ति का अंश समझते हैं।

मध्यमहेश्वर भी एक केदार है। इन्हें शिव की नाभि भाग माना जाता है। वैसे तो महाभारत काल से पहले ही शैव मत का प्रचार यहाँ हो चुका था, क्योंकि पहले भी आदिवासी लोग लिंग पूजा वगैरह करते थे। कुणिन्द शासक के समय की अनेक सामग्री प्राप्त हुई है जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि कुणिन्द शासक शैव मती थे, कत्थूरी काल में भी शैव मत का अच्छा प्रचार हुआ था, यहाँ पर उस काल में शैव मंदिर का निर्माण करवाया चंद राजाओं के समय में भी शैव मत का प्रचार करवाया तथा शंकराचार्य को हिन्दू धर्म का उपासक, पुनःस्थापक माना जाता है। [१](''कहा जाता है कि शंकराचार्य ने केदारनाथ में अपना देहत्याग किया था।'')[१] कत्थूरी काल को शैव धर्म के प्रचार का स्वर्ण युग माना गया है। शंकर भगवान का घर कैलाश पर्वत माना गया है। जितना प्रचार यहाँ शैव मत का हुआ उतना किसी और धर्म का नहीं और जितना प्रचार शैव मत का यहाँ हुआ उतना कहीं नहीं हुआ। यहाँ पर केदरनाथ, जागेश्वर, सोमेश्वर, बागेश्वर, रुद्रप्रयाग, द्वारहाट, गणानाथ, चम्पावत, सल्ट महादेव, चौड़ महादेव, गोपेश्वर, पाण्डुकेश्वर, कोटेश्वर, बैजनाथ, भीमनाथ आदि स्थानों पर महत्वपूर्ण मंदिरों की स्थापना हुई है।

- **वैष्णव सम्प्रदाय :**

यदि देखा जाय तो शैव सम्प्रदाय के बाद वैष्णव सम्प्रदाय का प्रचार आता है। इसके आधार पर कह सकते हैं कि शैव मत के साथ – साथ वैष्णव मत का प्रचार रहा होगा। कत्थूरी राज, बसन्तन देव, पदमदेव, आदि धर्म के उपासक थे। कत्थूरी काल से वैष्णवों का प्रारंभ माना जा सकता है। क्योंकि कत्थूरी काल में ही प्रसिद्ध विष्णु मंदिर बद्री आश्रम की नींव रखी गयी। तथा चंदराजा ज्ञानचंद ने १६९८ – १७०८ ई. में कत्थूर घाटी में एक बद्रीनाथ मंदिर का निर्माण किया जिससे बद्रीनाथ

मंदिर जो आज भी चर्चा में है। पंवार राजा ने भी वैष्णव धर्म को प्रोत्साहन दिया तथा अनेक मंदिर बनवाये और मंदिरों के लिए भूमि प्रदान की। कुछ मुख्य वैष्णव मंदिर जैसे भविष्य बद्री, वृद्ध बद्री, आदिबद्री, देवप्रयाग का रघुनाथ मंदिर, उत्तरकाशी में परशुराम तथा विश्वनाथ मंदिर, बागेश्वर का वेणीमाधव मंदिर आदि। अनेक लक्ष्मीनारायण मंदिरों की भी स्थापना हुई।

- **शाक्त धर्म :**

यहाँ पर शैव धर्म, वैष्णव धर्म के अलावा शाक्त धर्म भी प्रचलित था। पर पश्चिमी उत्तराँचल में इसको माननेवाले अधिक थे। जैसे दुर्गा, पार्वती, काली, भवानी, महिष, मर्दिनी आदि देवीयों की मूर्तियाँ विभिन्न स्थानों से प्राप्त हुई है। इनके मंदिर अल्मोड़ा, कत्थूर, दुनागिरी, नैनीताल, पूर्णागिरी, जागेश्वर, गंगोलीहाट आदि स्थानों पर है। अगर आज के समय में देखा जाय तो अभी यहाँ के निवासी सभी देवी – देवताओं की पूजा करते हैं। यहाँ पर सूर्य, नागर्जा, नरसिंह, भैरवनाथ, नन्दा, उफराई देवी, गोरिल देवता, गंगनाथ, कौरव पांडवों के जागर, अंछरी, अतृप्त आत्माओं का जागर, हरु सैंम का जागर, कालसिण देवता, गंगूर मोला और सिदुवा, बिदुआ के जागर, देवमंगल बुढ़ा केदार का जागर, कलविष्ट, भोलानाथ, भलैनाथ देवता, ऐडी देवता, सैयदों के जागर, कालू भण्डारी, माधोसिंह, आदि देवी – देवताओं की पूजा की जाती है, इनमें से कुछ तो राजाओं की आत्माएँ हैं कुछ परियाँ हैं।

कुमाऊँ के लोगों का चला आ रहा यह विश्वास है कि उनके परिवार पर जब भी कुछ संकट या विपत्ति आती है तब वह अपने – अपने कुल देवता की पूजा करते हैं। जो घर से दूर होता है वह ऊँचैण (चावल, पैसे, उड़द की दाल मिश्र) खिचड़ी उनके नाम पर मंदिर में रख देते हैं तथा गाँव जाने पर उसकी पूजा करते हैं और कुल

देवता या दूसरे देवता जिसको वह पूज नहीं सके उसका जागर लगाते हैं और उनको पुकारकर उनके जरुरत की समाग्री जो उनको चढ़ाई जाती है। जैसे धोती, चावल, खिचड़ी, लकड़ी का डंडा इत्यादि चढ़ाते है, अभी भी यह रिवाज कायम है या उनके नाम पर बकरी, भैंस, मूर्गी इत्यादि की बलि देते हैं। मगर अभी बलि प्रथा वर्तमान में बंद करा दी गई है, फिर भी लोग बलि देते हैं और अपने देवी देवता को प्रसन्न करते हैं। जिससे उनके घर में खुशियाँ बनी रहे।

जब जागर लगाते हैं तब कुछ लोग जो पूजा करते है। उन पर वह आत्माएँ आती है और उनको उनके प्रश्नों का उत्तर देती है तथा तब सब वस्त्र उन्हें दिये जाते हैं, इस प्रकार यह प्रथा चली आ रही है।

- **बौद्ध धर्म – जैन धर्म :**

बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध तथा जैन धर्म के संस्थापक महावीर स्वामी माने जाते हैं। इनसे पहले भी कईयों ने इस धर्म को स्थापित करने की कोशिश की। मगर वह पूर्णतः सफल नहीं हो सके। लगभग ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व विश्व में एक असाधारण आध्यात्मिक चेतना जगी थी उसी का यह परिणाम था। बौद्ध धर्म का मानना है कि अंधविश्वास मत करो इससे सदाचार, पवित्र जीवन, नैतिकता स्वार्थत्याग आदि पर अधिक बल दिया ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, सूद्र सभी बौद्ध धर्म में जाकर अपना गोत्र जाति छोड़ देते हैं। यह वर्ग विहीन, जाति विहीन परम्परा थी, जो अभी भी विद्यमान है। जैन धर्म का मुख्य उद्देश्य मोक्ष प्राप्त करना था। वह अहिंसा में विश्वास रखते थे। वह अपने शरीर को जो व्यक्ति ज्यादा कष्ट पहुँचायेगा उसकी आत्मा उतनी ही अधिक उत्कर्ष होगी ऐसा मानते हैं वे आत्मा की अमरता में विश्वास करते हैं।

कुमाऊँ के धार्मिक संस्कार :

• वर्ण / जाति प्रथा :

जिस प्रकार से हमारे वेदों में चार जातियाँ बताई गई है ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्व और शूद्र। उसी प्रकार से कुमाऊँ में भी यह चार जातियाँ पाई जाती है।

• ब्राह्मण :

कुमाऊँ क्षेत्र में ब्राह्मणों की कई उपजातियाँ होती है। लगभग १५० उपजातियाँ पं. परशुराम जोशी ने कुर्माचली ब्राह्मणों की सूची में बताया है, इसमें मुख्य चार वर्गों में बाँटा गया है। (१) कत्थूरी और चंद शासकों के समय के आगत ब्राह्मण (२) प्राचीन ब्राह्मण (३) वृत्ति वाले ब्राह्मण (४) कठुवा ब्राह्मण।

(१) यह ब्राह्मण अपने गाँव के नाम से और अपने काम के नाम से जाने जाते थे। जैसे – चहज के चौंदसी, चहजी, ज्योतिष को जोशी, सन गाँव के सनवाल, दुग गाँव के दुगाल, कपोल गाँव के कपोली आदि।

(२) लगभग छठी शताब्दी के बाद कत्थूरी और चंद राजा के समय कुछ ब्राह्मण उत्तर पूर्व तथा दक्षिण से भारत में आये तब यह दरबार में मंत्री, पुरोहित, वैद्य आदि पदों पर विराजमान थे, और अपनी उच्चता बनाये रखने के लिए इन्होंने खुद को दक्षिण भारत तथा पूर्वोत्तर भारत के ब्राह्मणों के साथ खुद को जोड़ लिया। इनको ठुल ब्राह्मण या ठुल धोतिक अर्थात् बड़ी धोती वाले या बड़े ब्राह्मण कहा जाने लगा। जिसमें गल्ली, झिजाड़, दन्या, मसमोली, पोखरी के जोशी, पल्यूँ, पाटिया, सिमल्टिया के पांडे, अवस्थी, पंत आदि जाति के ब्राह्मणों को माना जाता है।

(३) यह इस प्रकार के ब्राह्मण होते हैं जो आचार – व्यवहार की न्यूनता और धनभाव आदि के कारण वृत्ति अर्थात् कर्मकाण्ड करने वाले ब्राह्मण बन जाते हैं। इनको नान, धोतिक अर्थात 'छोटी धोती के' और 'नान ब्राह्मण' अर्थात छोटे ब्राह्मण के नाम से जाना जाता है। यदि धन, सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ जाये तो यह अगली पीढ़ियों में बड़े ब्राह्मणों में शामिल हो जाते हैं।

(४) इस प्रकार के ब्राह्मणों से उच्च जाति के ब्राह्मण संबंध नहीं रखते है। अपनी बेटी का विवाह या कोई भी तीज त्यौहार में बुलाते नहीं है। परन्तु अब जमाने के साथ उनके विचार बदल रहे हैं, जो पढ़े लिखे तथा समझदार लोग हैं, वह अब शादी ब्याह इस प्रकार की जातियों में करते हैं, बशर्ते यह ब्राह्मण धनाढ्य होने चाहिए।

- **क्षत्रिय :**

इनके लिए 'खसिया' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। यह एक तिरस्कार का शब्द माना जाता है। इनको चार भागों में बाँटा गया है। (१) सूर्यवंशी राजपूत (२) चन्द्रवंशी राजपूत (३) खश राजपूत (४) अन्य राजपूत।

परन्तु बद्रीदत्त पांडेजी ने लिखा है। चन्द्रवंशी राजपूत को भी विभिन्न भागों में विभाजित करके प्रस्तुत किया है। चंद्रवंशी राजपूतों को राजा सोमचंद झूसी से आये थे, कहते थे उन्हें बुलाकर लाये थे। किसी का कहना है वे बद्रीनाथ देखने आये थे वह चंदेले राजपूत थे। परन्तु कुमाऊँ में यही माना गया है कि वह प्रयास के पास झूसी नगर से आये थे, अब उनके पीढ़ीयाँ (१) अल्मोड़ा में राजा आनंदसिंह हैं (२) काशीपुर में राजा उदयसिंह वह कुँवर आनंदसिंह व कुँ. भूमालसिंह हैं। इनको गदी पर बैठने से चंद कहा गया तथा यही इनका वंश बन गया।

[२](१) परगना सोर पट्टी खड़ायत में मौंजा जीवी व सलमोड़ा में रौतेले (२) कोटा में मौजा परेवा (३) परगना ध्यानीरौ पट्टी मल्लीरौ में जमरोड़ी व रौतेला कोट गाँवों में।)[२] (४) परगना बारामंडल पट्टी तिखून के बंटुगल, सल्ला, रैगल, कबला आदि गाँवों में (५) उच्यूर पट्टी के पिठौनी गाँव में (६) अठागुली पट्टी – मौजे छाना, छबीसा उम्वाड़ी (७) बौरारौ – खाड़ी गाँव (८) परगना चौगर्खा पट्टी टीठागाड़ – नौगाँव, छौना, बिलौरी, मटेला (९) परगना पाली पट्टी सिलोर – मौजे तिपोल सररगा (१०) पट्टी तल्ला द्वारा में साहुरगी व मासौ में (११) नया पट्टी में मौजे सबोली (१२) ककलासों पट्टी में फलसौं व शिरकोट में (१३) महरत्पड़ी में मौंजा बचकोट उर्फ बचकाँडे (१४) धनियाँकोट के मौंजे हरतप व सिमलखा में और भी कई गाँवों में रहते है। यथा – स्यालगढ़ी, दाड़िमा, ऐराड़ी, नरोली, पिंड़ौली, डंग्यूड़ा, बदनौली, पत्तापारगी, बगवाली, पिलसाज आदि – आदि।

ये सब अपने को काश्यप गोत्री, माध्यन्दिनी शाखा तथा त्रिंप्रवर का बताते हैं और ज्यादातर शाक्त है। ये अपनी स्त्रियों के हाथ का भात नहीं खाते थे, मड़वा भी नहीं खाते, ये लोग सिपाही बनते हैं। कुछ नौकरी करते हैं, बाकी खेती। पर अब पुरानी बातें सब मिटती जाती है।

- **खरकू :**

ये रौतेल गुसाईं अपने को कत्थूरी खानदान के बताते हैं। पहले इनका बड़ा प्रभाव था। विजयचंद के समय श्री सुखराम खरकू बड़े प्रभावशाली फौजदार हुए हैं।

- **अन्य चंद्रवंशी :**

मएकोटी राजा की संतान नैपाल के इलाके पीउठना में है। कुमाऊँ में अब कम है। कुछ रौतेले इनके वंश के कहीं – कहीं गंगोली में है।

- **अन्यान्य राजपूत :**

बोरा – कुथलियाबोरा, कैरा, बसेडा, रावत, खाती, पंचपुर्वीया, तड़ाकी उर्फ तड़ागी, बुटौला, रावत, बागड़ी, महता, असवाल, बत्वलि, रारगा, बलदिया, कठायत, मिराल, अधिकारी, नेगी, पँवार, टाकुली, भंडारी या भनारी, खड़ायत, मियाँ आदि।

- **वैश्य वर्ग :**

इस वर्ग के लोग बहुत कम जगह पर कुमाऊँ में बसे हैं। यह लोग अपने आप को किसी, क्षत्रियों से कम नहीं समझते। यह माँस भी खाते हैं। खेती करते हैं तथा नौकरी भी करते है। इनमें अग्रवाल, ठुलधरिये साह (बड़े घर के साह), गंगोला, सलामगढ़िया, कुमरयें साह, तोला, खोलभितेरिया, चौधरी, द्वारहाट के चौधरी, तम्बोली, खत्री, कायस्थ आदि आते हैं। कुछ और जातियाँ भी है जैसे पट्या, धोबी, ठठेरा, सौन – अगारी, आदि। पुराने समय में इनको शूद्रोम को डोम कहते थे। परन्तु अब सरकार ने कानून बना दिया है कि जो डोम को डोम कहेगा उसे सजा दी जाएगी। गाँधीजी की कृपा से इनको हरिजन कहा जाने लगा।

(१) प्रथम श्रेणी में – टमटे, कोली, ओड़, लोहार आते है।

(२) भूल, रूड़िया, चिमड़िया, आगरी, पहरी आते है।

(३) चमार, मोची, बखरिया, धूना व हनकिया आदि है।

(४) चौते दर्जे में बादी, हुड़किया, दरजी, ढ़ोली, डुमजोगी, भाँड, हलिया, पहरी आते है।

धार्मिक स्थल :

[३](महत्वपूर्ण तथ्य

केदारनाथ मंदिर की समुद्रतल से ऊँचाई ३,५८१ मीटर है।

ब्रदीनाथ मंदिर की समुद्रतल से ऊँचाई ३,१३३ मीटर है।

यमुनोत्तरी मंदिर की समुद्रतल से ऊँचाई ३,१८५ मीटर है।

गंगोत्तरी मंदिर की समुद्रतल से ऊँचाई ३,०४८ मीटर है।

नंदा राजजात का यात्रा पथ लगभग २९० किलोमीटर है जिस पर पैदल यात्रा होती है।)[३]

(३) राजनैतिक स्थिती :

• प्रागैतिहासिक काल :

उत्तराखण्ड में कई स्थानों पर प्रागैतिहासिक अवशेष प्राप्त हुए है । जैसे पाषाण, कप–माकर्स और शेलाश्रय आदि ।

• आद्य या पौराणिक काल :

पुराने समय से अभी तक उत्तरांचल को देवभूमि या देवों की पवित्र भूमि के नाम से जाना जाता रहा है। इसके बारे में इतिहास ऋग्वेद, महाभारत तथा पुराणों में मिलता है। इस भूमि को पुण्यभूमि भी कहा जाता है। पौराणिक साहित्य में गढ़वाल क्षेत्र को केदारखण्ड तथा कुमाऊँ क्षेत्र को मानसखण्ड कहा जाता है तथा नन्दापर्वत से

कालगिरि का क्षेत्र एक माना गया है। कुमाऊँ को 'कुर्मांचल' नाम से भी जाना जाता है। गढ़वाल तथा कुमाऊँ को नंदादेवी पर्वत से विभाजित किया गया है। पुराने समय में इनको केदारखण्ड, मानसखण्ड, ब्रह्मपुर, खसदेश, और उत्तराखण्ड भी कहते थे। बौद्ध ग्रंथ में इसका नाम हिमवन्त है। महाभारत में भी कई जगह उत्तराखण्ड का नाम आया है। माना जाता है कि कुन्ती एवं द्रौपदी सहित पाण्डवों ने अपने जीवन को त्यागा था और स्वर्ग सिधारे थे।

- **ऐतिहासिक काल :**

विभिन्न विद्वानों तथा अध्येताओं ने इतिहास के स्त्रोत निम्न आधार पर पाये हैं। जैसे कि ताम्रपत्र, स्मारक, प्रस्तर, लेख, सिक्के आदि। साहित्य में भी ऐतिहासिक काल का उल्लेख मिलता है। प्राचीन उत्तराखण्ड इतना विकसित नहीं था ना ही उसमें आज के समय जितनी भी सुविधा थी। इस वजह से समय – समय पर अनेक राजाओं ने राज्य किया था। ऐसा भी कह सकते हैं कि उस समय में जो भी राजा इस भू – भाग के आसपास थे उन्होंने बाकी हिस्से को अपने राज्य में मिला लिया।

[४](प्रख्यात विद्वान टैप्सन का विचार है कि यह सम्भव है कि शिशुनाग और नन्द उन पर्वतीय सरदारो के वशंज थे जिन्होंने मगध राज्य को विजय करके हस्तगत किया था। यद्यपि नन्दों की उत्पति के बारे में कोई निश्चित जानकारी नहीं है, परन्तु सम्भवतः यह नाम जनजातीय है। उसका सम्बन्ध उत्तरप्रदेश के हिमालय क्षेत्र में गंगा और कोसी नदी के बीच, रामगंगा नदी के समीप रहनेवाले नन्दों में जोड़ा जा सकता है।)[४]

कुणिन्द शासक यह जाति तृतीय – चतुर्थ सदी में उत्तराखण्ड में शासन करती थी। कर्तृपुर राज्य उसकी स्थापना कुणिन्द ने की थी। पाँचवीं शती के उत्तराधर्म में

नागों ने कर्तृपुर राज्य पर अपना शासन स्थापित किया। जिसमें कुणिन्दों के शासन का अंत हो गया। फिर नागों का शासन समाप्त कर कन्नौज के मौखरि राजवंश ने अपना अधिकार जमाया। फिर उनके बहनोई थानेश्वर नरेश हर्षवर्धन ने राज्य किया जो हर्षवर्धन ७वीं शती के थे। हर्षवर्धन की मृत्यु बाद उत्तराखण्ड छोटे – बड़े राज्यों में बँट गया तथा बहुत बाहरी आक्रमणों का प्रमाण भी मिलता है तथा अनेक राजा भी हुए। कुछ इतिहासकार मानते है कि इसी प्रकार की ऐतिहासिक स्थितियों में 'कार्तिकेयपुर राजवंश' की स्थापना हुई। यह उत्तराखण्ड का पहला राजवंश माना जाता है। इसके कुछ अभिलेख भी मिले हैं। यह राज्य सतलज से मण्डकी तक हिमालय से मैदानी क्षेत्र रोहिल खण्ड तक फैला था। इन्होंने ७०० ई. से १०५० तक राज्य किया, जिसमें तीन पीढ़ीयाँ थी। इस में निम्बर, ललित शूरदेव, सलोणादित्य आदि प्रतापी राजा थे। इन्होंने तीन सौ साल तक राज्य किया, बाद में इन्होंने बैजनाथ को राजधानी बनायी। वहाँ वैद्यनाथ कार्तिकेयपुर बसाया और थोड़े ही समय में इस राजवंश का अंत हो गया। कुछ समय उपरांत मध्यकालीन कुमाऊँ में कत्यूरीयों का शासन चला परन्तु वह कमजोर थे और फिर से उत्तराखण्ड बहुराजकता के घेरे में आ गया। ८८८ ई. में गढ़वाल का परमार राजवंश स्थापित हुआ तथा इस बीच मुगलों ने, तिब्बतियों ने तथा अंग्रेजों ने आक्रमण किया। पर अंत में आधा अंग्रेजों का शासन हो गया तथा भारत में विलय के बाद टिहरी राज्य को उत्तरप्रदेश का एक जनपद बना दिया गया। इस प्रकार कुमाऊँ गढ़वाल में बदलाव देखे गये। कुमाऊँ में चन्द राजवंश १४वीं शती के बाद अपना अधिकार जमा पाये पर उनका भी १७९० में गोरखा आक्रान्ताओंने अंत कर दिया। वर्ष १८०४ में गोरखा के हाथों गढ़वाल नरेश प्रद्युम्नशाह वीरगति को प्राप्त हुई, तथा पूरे गढ़वाल पर गोरखो का शासन स्थापित हो गया। इससे आजाद होने के लिए अंग्रेजों की सहायता ली। अंग्रेजों ने अपनी सेना भेजी पर गढ़वाल

नरेश जो प्रद्युम्नशाह के पुत्र हरिद्वार में रहते थे उन्होंने अंग्रेजों से जो इस दौरान कर्ज लिया था वह चुका न सके इसलिए अपना कुछ राज्य उनको दे दिया। गोरखों से युद्ध में अंग्रेजों ने काली नदी के पश्चिम का पूरा प्रदेश जीत लिया था और इस तरह पूरे कुमाऊँ पर अपना अधिकार कर लिया।

२७ अप्रैल, १८१५ कुमाऊँ पर अंग्रेजों का शासन स्थापित हो गया। तथा १८१५ में पूर्वी गढ़वाल तथा कुमाऊँ अंग्रेजों के अधिकार में आ गया। उन्होंने कर्नल एडवर्ड गार्डनर को यहाँ का प्रथम कमिश्नर तथा एजेन्ट गर्वनर जनरल बना दिया। अंग्रेजों ने कुमाऊँ जनपद तथा टिहरी गढ़वाल राज्य इस प्रकार दो भागों में बाँट दिया। कुमाऊँ को भी प्रशासनिक सुविधा के लिए अल्मोड़ा और नैनीताल दो जनपदो में बाँट दिया जो स्वतंत्रता मिलने तक बनी रही। इसके बाद भारत के बड़े भाग में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना हो गयी थी तथा उत्तराखण्ड़ में और पूरे भारत में स्वाधीनता की माँग करने लगे थे। सब अंग्रेजी शासन को हटाने की माँग करने लगे थे। १८५७ ई. में कालू महरा नामक व्यक्ति ने क्रान्तिकारी संगठन बनाया। २०वीं शती के प्रथम दशक में पंडित गोविन्दवल्लभ पन्त ने राजनीति में प्रवेश किया तथा १९१६ में कुमाऊँ परिषद बनी। लगभग उसी दौरान बैरिस्टर मुकुन्दीलाल और अनुसूया प्रसाद बहुगुणा ने गठवाल में कोंग्रेस कमेटी की स्थापना की।

असहयोग आन्दोलन तथा नमक सत्याग्रह में भी उत्तराखण्ड ने लोगों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। २६ जनवरी १९३० में सारे क्षेत्र में झण्डा फहराया गया इसी साल हवलदार वीर चन्द्रसिंह गढ़वाली ने निहत्थे अफगान स्वतंत्रता सेनानियों पर गोली चलाने से मना कर दिया, यह घटना इतिहास के सुनहरे पन्नों पर पेशावर काण्ड के नाम से प्रसिद्ध है। इस तरह आजादी की जंग चलती रही। इसमें हीरामणी, हरिकृष्ण, नरसिंह धानक, टीकासिंह कन्याल, गंगाराम, खीमादेव, चूडामणि,

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY
The M. S. University of Baroda

बहादुरसिंह, सुमन आदि शहीद हो गये। १९४९ को टिहरी राज्य उत्तर प्रदेश का एक जनपद बना। उत्तराखण्ड को देश का राज्य बनाने के लिए कई नारी – पुरुषों, छात्रों ने अपना बलिदान दिया तथा ९ नवम्बर २००० को उत्तरांचल देश का २७वाँ राज्य बन गया। इस दिन को हर साल सभी उत्तराँचलवासी बड़ी धूमधाम से एकत्र होकर (संस्था बनी है) वहाँ मनाते है। चाहे देश के किसी भी भाग में हो इस दिन सभी उत्तराखण्डवासी एकत्र होकर इसे मनाते है।

(४) कलात्मक स्थिति :

कुमाऊँ क्षेत्र में विभिन्न क्षेत्रों की तरह कला का भी विकास बहुतायत मात्रा में देखने को मिलता है। जैसे –

कुमाऊँ के किले :

- **खगमरा किला :**

अल्मोड़ा नगर के पूर्वी उत्तर पर स्थित इस किले का निर्माण राजा भीष्मचंद्र (१५५५ – ६०) ने किया था।

- **नैथडा किला :**

यह किला अल्मोड़ा जनपद के रामनगर – गनाई मोटर मार्ग पर मासी से लगभग ५ कि.मी. की खड़ी चढ़ाई पर नैथड़ा देवी के मन्दिर के नजदीक है। इसे गोरखा कालीन समय का माना जाता है।

- **बाणासुर किला :**

यह किला लोहाघाट – देवीधुरा मार्ग से ७ कि.मी. की दूरी पर एक ऊँची चोटी पर स्थित है। इसका निर्माण बाणासुर नामक राक्षस ने किया था।

- **मल्लामहल किला :**

अल्मोड़ा नगर के ठीक मध्य में यह स्थित है। इसे चंद्रवंशीय राजा कल्याणचंद ने बनवाया था।

- **राजबुंगा किला :**

चम्पावत में स्थित इस किले को राजा सोमचंद ने बनवाया था।

- **लालमंडी किला :**

अल्मोड़ा के पल्टर बाजार स्थित छावनी के भीतर इस किले को १५६३ में राजा कल्याणचन्द ने बनावाया था। इसे कोर्ट मोयरा भी कहते हैं।

- **सिरमोही का किला :**

तहसील लोहाघाट में स्थित ग्राम सिरमोली में यह एक प्राचीन किला है।

शैलचित्र :

- **कसार देवी :**

अल्मोड़ा मुख्यालय से ६ कि.मी. की दूरी पर स्थित कसारदेवी में चौदह नृतकों का चित्रण किया गया है।

- **किमनी शैलाश्रय :**

यह चमोली जनपद की पिण्डर घाटी में कर्णप्रयाग ग्वालदम मार्ग पर थराली के पास किमनी गाँव में है। यहाँ पर सफेद रंग से चित्रित हथियार तथा पशु आकृतियाँ पायी गयी है।

- **ग्वारख्या उड़यार :**

बदरीनाथ मार्ग पर चमोली से ८ कि.मी. उत्तर पश्चिम में अलनन्दा के दाहिने पार्श्व में छिनका से लगभग २ कि.मी. की दूरी पर डुंग्री गाँव में पाषाण कालीन मानव, भेड, बारहसिंगा व लोमड़ी सदृश आकृतियाँ बनी है। यह चित्र लाखु – उड़यार के चित्रों से अधिक चटखदार हैं। यह शैलाश्रय लगभग १० मीटर ऊँचा है।

- **पेटशाल :**

अल्मोड़ा – पिथौतगढ मार्ग पर पेटशाल व पूनाकोट गाँवो के बीत स्थित कफ्फरकोट में कत्थई रंग से नृत्यरत मानवकृतियाँ है।

- **फलसीमा :**

अल्मोड़ा नगर से ५ कि.मी. की दूरी पर अल्मोड़ा पिथौरागढ़ मोटर मार्ग पर स्थित फलसीमा में योग मुडा में मानव, बकरी की आकृति व नृत्य दृश्य पत्थरों पर उकेटे गए है।

- **लाखु – उड्यार :**

अल्मोड़ा नगर से १३ कि.मी. की दूरी पर अल्मोडा पिथौरागढ़ मार्ग पर बाड़े छीना के पास दलबैंड पर स्थित है। यहाँ आदिम मानवकृतियों व पशुओं के चित्र हैं। कहीं मानव आकृति में कहीं समूह में नृत्यावस्था में है कहीं – कहीं अकेले रंगों से सजाया है। इनको १९६३ में खोजा गया था।

- **हुडली :**

उत्तर काशी स्थित हुडली में नीले रंग के शैलचित्र बनाये हुए है।

प्रमुख शिलालेख :

देहरादून के उत्तरी भाग में यमुना नदी के किनारे स्थित कालसी से सम्राट अशोक द्वारा स्थापित शिलालेख प्राप्त हुआ है। इस में 'पालि' भाषा में लेख उत्कीर्ण हैं।

- **लाखामण्डल शिलालेख :**

देहरादून के जौनसार – भाबर स्थित लाखामण्डल से राजकुमारी ईश्वरा का शिलालेख प्राप्त हुआ है। इस शिलालेख के अनुसार यमुना उपत्यका में यादवों का राज्य था।

लोककला :

- **ऐंपण (छिपण) :** इसका शाब्दिक अर्थ लीपना या सजावट होता है। जब कोई त्यौहार, शादी आदि शुभ कार्य होते है तब यह घर की देहरी (दरवाजे) आँगन में बनाये जाते हैं। इसमें विस्वार (चावल का पीठा) तथा लाल मिट्टी से सुन्दर चित्र बनाये जाते हैं। जिस में सूर्य, चन्द्र, स्वास्तिक, शंख, घंटा, विभिन्न तरह के फूल, बेल, नाग तथा ज्यामितीय आकृति बनाते हैं। पहले केन्द्र से शुरूआत करते हैं बाद में परिधि की ओर बढ़ते हैं।

- **ज्यूंति मातृका :** [५](ज्यूति मातृका में विभिन्न रंगो के प्रयोग से लक्ष्मी, सरस्वती, गणेश आदि के चित्र बनाये जाते हैं। यह मुख्यतः जन्माष्टमी, दशहरा, नवरात्री, दीपावली आदि त्योहारों के अवसर पर बनाया जाता है।)[५]

- **प्रकीर्ण :** प्रकीर्ण अंगुलियों से कागज, दरवाजों, चौराहों आदि पर बनाया जाता है।

- **पौं :** महालक्ष्मी पूजा के दिन घर के मुख्य द्वार या ओखली से तिजोरी या थान (पूजागृह) तक लक्ष्मी के पद चिन्ह बनाये जाते हैं। उनको पौं कहा जाता है।

- **डिकारे या डिकाल :** घरों में प्रयुक्त होनेवाली मिट्टी से देवी – देवताओं की मूर्तियाँ बनाकर उन्हें विभिन्न रंगो से सजाया जाता है। मिट्टि के अलावा केले के तनों, भृंगराज आदि से विभिन्न आकृतियाँ बनायी जाती है।

- **गृह/हस्तशिल्प उद्योग :** [६](रिंगाल चमोली, अल्मोडा, पिथौरागढ़ और जनपद का प्रमुख हस्तशिल्प उद्योग है। रिंगाल से डाले, कंडी, चटाई, सूप, टोकरी, मोस्टा आदि तैयार किये हैं। जिनका उपयोग घरेलू एवं कृषि कार्यों के लिए होता है।)[६]

- **बाँस :** बाँस से सूप, डाले, कंडी, छापडी, टोकरी आदि बनाये जाते हैं।

- **कालीन :** पिथौरागढ़ जनपद के धारचूला एवं मुन्स्यारी तथा चमोली के कुछ क्षेत्र तथा बागेश्वर से आगे कुछ क्षेत्र सीमगढ़ आदि स्थानों पर यह बनाये जाते हैं। भेडों से ऊन निकालकर पश्मीना, चुटका, कम्बल, दन, थुलमा और पंखी आदि बनाते हैं।

- **भंगेल :** उत्तरांचल के बहुत से क्षेत्रों में भांग के पौधे लगाकर उनमें से रेशे निकालकर कुथले, कम्बल, दरी, रस्सियाँ आदि बनाते हैं।

- **ताम्रशिल्प :**

अल्मोड़ा में ताम्रशिल्प एक प्रमुख लघु उद्योग के रुप में प्रसिद्ध है। अन्य स्थानों पर रहनेवाले कारीगर टम्टा तांबे से घरेलू व धार्मिक कार्यो में उपयोग होने वाली वस्तुएँ गागर, लोटा, परात, कलश, रणसिंह, दीप, पंचपात्र आदि बनाते हैं।

- **नृतिका शिल्प :** यह मिट्टी से बर्तन बनाने का कार्य है। इससे सुराही, कलश, गमला, गुल्लक, चिलम आदि प्रमुख हैं।
- **चर्मशिल्प :** चर्मशिल्प अर्थात चमड़े से कार्य करना उसको बाडई या शारकी कहते हैं।
- **काष्टशिल्प :** पूरे उत्तरांचल में लकड़ी की बहुतायात के कारण यह बहुत प्रसिद्ध है। लकड़ी से पाली, ठेकी, कुमया भदेले, नाली आदि तैयार करते हैं।

आर्थिक स्थिति :

कुमाऊँ का अधिकतर भाग पर्वतीय है इसलिए इसकी भूमि में खेती बहुत कम हो पाती है। कहीं – कहीं पर पथरीली, ऊबड़ – खाबड़ भूमि है। घुमावदार पर्वतों पर सर्पाकार खेत है जिसमें कुमाऊँ के निवासी रात – दिन खेती करते हैं और इतनी मेहनत करने के बाद भी पेटभर अनाज नहीं उगा पाते। क्योंकि कभी भी बरसात, ओले पड़ जाते हैं। इसीलिए वहाँ के लोग तराई की जगहों से खाने – पीने की वस्तुएँ खरीदकर लाते हैं। और नौकरी करने शहरों की तरफ चले आये हैं। इस कारण से बहुत से पर्वतवासी तराई क्षेत्रों में बस गये हैं।

कुमाऊँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि तथा पशुपालन है यहाँ अत्यंत प्राचीन समय से खेती चली आ रही है। इसीलिए यहाँ पर आज भी खेती बड़ी ही चाव से की जाती है। सीढ़ीदार खेतों में कृषि उद्योग फल – फूल रहा है। पानी के लिए यहाँ के लोग नदी, नाले, वर्षा तथा प्राकृतिक ˙ ोतों पर आधारित हैं। परन्तु नदियों का उपयोग ऊँचाई के कारण कम ही कर पाते हैं। प्राकृतिक ˙ ोत भी अब सूखते जा रहे हैं क्योंकि यहाँ पर सरकारी दखल दिया जाने लग गया है तथा पर्यटक भी आने लगे हैं। जो खेत नदियों के किनारे बसे हैं उनमें अच्छी फसल हो जाती है जिनको

तलाऊ भूमि कहते हैं तथा जो ऊपर हैं उनको वर्षा पर आधारित रहना पड़ता है। जिनको ऊसर भूमि कहा जाता है।

तराई तथा इन क्षेत्र फसल के लिए अच्छा माना गया है। तथा यहाँ पर इतनी सुविधाएँ भी नहीं है। जिससे दूसरे क्षेत्रों में खेती पिछड़ी हुई है। यहाँ के लोग पुराने तरीके से खेती करते हैं। उचित मार्गदर्शन भी नहीं है तथा कृषि के अलावा दूसरे क्षेत्रों के लिए कार्य करने हेतु जागृत करना चाहिए और आर्थिक सहायता प्रदान करनी चाहिए।

यहाँ पर प्राचीन समय से ही गेहूँ, चावल, महुवा, कौंणी, मक्का, सरसों, उड़द, मसूर, भट, गौहत, हल्दी, धनियाँ, अदरक, आलू, पत्ता गोभी, लौकी, कद्दू, तुरई, जौं, बैंगन, गडेरी, बीन, ककड़ी, आम, लीची, सेब, तिल, माल्टा, नासपाती, अखरोट, आलू बुखारा,, पुलम, बड़ा नींबू, अमरूद, आदि की खेती तथा पेड़ – पौधे देखने को मिलते हैं।

इस क्षेत्र में गाय – भैंस, बकरी, भेड़ आदि पाले जाते हैं। गाय यहाँ पर कम मात्रा में दूध देती हैं। घोड़े – खच्चर सामान लाने – ले जाने के लिए पालते हैं। भेड़ – बकरियों को अधिकतर भोटान्तिक लोग ऊन के लिए पालते हैं। यहाँ पर ऊनी वं , ऊनी चादर, कम्बल, पंखी शॉल, कालीन आदि को भोटान्तिक लोग घर पर ही बनाते हैं। अगर इसका उद्योग लगाया जाए तो यह काफी आगे बढ़ सकता है।

पर्यटन स्थल भी बहुत से देखने में आते हैं। वैसे देखा जाय तो सब जगह यहाँ पर हरियाली है पर विकास करने की आवश्यकता है। यहाँ पर धार्मिक एवं प्राकृतिक सौन्दर्य देखते ही बनता है। जैसे रानी खेत, अल्मोड़ा, बागेश्वर, कौसानी, नैनीताल, भीमताल, ऋषिकेश, नन्दादेवी, मसूरी, हरिद्वार, यमुनोत्री, गंगोत्री, बद्रीनाथ, जागेश्वर,

सीमगढ़, लैंसडाउन, औली फूलों की घाटी, देहरादून, जिम कार्बेट पार्क, विन्सर वन्य, जीव विहार, राजाजी राष्ट्रीय उद्यान, पिण्डारी ग्लेशियर मिलम, ग्लेशियर मायावती आश्रम, नौकुचियातल, डोडी ताल, पाताल भुवनेश्वर, वासुकीताल, देवरिया ताल, आदि घूमने के लिए बहुत सुन्दर स्थल हैं।

यहाँ पर चीड़, सौल, बाज, बुरौश, देवदार, आदि के पेड़ देखने को मिलते हैं। यहाँ पर घने वन में काफल (फल का पेड़), हिसारू, किरमड, घिंघारु, धुनकाफल तौसार, किम, मौल्यो, चुतर, बुरौश के फूल आदि खाने वाले फल हैं।

यहाँ पर बरफ जो दिसंबर से फरवरी तक पड़ती है। उस मौसम में यहाँ पर घूमने में ऐसा लगता है मानो स्वर्ग में आ गये हों।

विद्युत उद्योग के बारे में कहा जाय तो नदियों का पानी अधिकतर बहता रहता है। अगर बाँध बनाये जायें जो कम हैं तो बिजली का उत्पान बढ़ जाएगा तथा दूसरे राज्यों को बिजली बेच भी सकते हैं।

खनिज उद्योग भी यहाँ ज्यादा विकसित नहीं है। यहाँ पर डोलमाईट मैग्नेसाइट, चूना पत्थर, सोप स्टोन, ताँबा, जिप्सम, संगमरमर, फास्फोराइट, राक, फास्फेट, सीसा, सेल खड़ी, चाँदी, लोहा, अयस्क थोड़ी – थोड़ी मात्रा में मिलता है। जो देहरादून, बागेश्वर, अल्मोड़ा, टिहरी, पिथौरागढ़, पौड़ी, नैनीताल चमोली आदि जगहों पर मिलता है। लालकुँआ में पेपर मिल जैसे बड़े उद्योग स्थित हैं। उधमसिंह नगर में बड़े उद्योग हैं जैसे एच.एम.टी. घड़ी बनाने का कारखाना आदि।

अब तो हरिद्वार में भी बड़े – बड़े उद्योग स्थापित हो गये हैं। तथा विकास की ओर हैं।

चाय का उद्योग भी लगभग समाप्त हो गया है परन्तु वर्तमान में उसे बढ़ावा देने की ओर ध्यान दे रहे हैं।

यहाँ पर चीड़ के वृक्ष बहुत हैं जिनमें से लीसा निकलता है जो पेन्ट उद्योग के लिए अच्छा है।

जड़ी – बूटीयाँ यहाँ पर ६३% वनों से मिलती हैं। जैसे बुरांश, आँवला, कस्तूरी आदि।

ताँबे के बर्तन आदि के लिए यह प्रसिद्ध है जिसको टमटा जाति बनाती है। यहाँ पर बर्तन, चखें, टोकरियाँ, चटाइयाँ आदि वस्तुएँ भी बनती हैं। तथा देवदार, टूनी, शीशम, अखरोट आदि की लकड़ियों से फर्नीचर आदि बनाया जाता है। चीनी तथा गुड़ की बडी – बड़ी मिल हैं।

व्यापार :

व्यापार के क्षेत्र में देखा जाय तो यहाँ से ऊनी वं , फल, मसाले आदि देहरादून, हल्दवानी, रामनगर, कोटद्वार में भेजे जाते हैं। वहाँ से भारत के अनेक क्षेत्रों में भेजते हैं। जैसे कि गुजरात के बड़ौदा में पहाड़ी द्योत मिलते हैं।

आज भी कई जगहों पर पवन चक्की चलती हैं। जिसमें गेहूँ, मडवा आदि पिसते हैं। वह पानी के सहारे चलती है इसलिए बरसात के समय नदियों के किनारे यह चलाते हैं। अधिकतर लोग आज भी ओखली में चावल, दाल, गेहूँ कूटते हैं तथा हाथ की चक्की में आटा पीसा जाता है। हर घर में हाथ की चक्की जो दो पत्थर (गोलाकार) उपर नीचे रखे होते हैं तथा उपर पकड़ने के लिए लकड़ी का हत्था लगा होता है उसमें दाल, गेहूँ, महुवा पीसा जाता है।

आज भी आर्थिक दृष्टि से यह क्षेत्र पिछड़ा हुआ है यदि नयी – नयी योजनाएँ चलायी जाए तो यहाँ पर बहुत कुछ विकास हो सकता है।

सार – संग्रह

- [७]('केदारखण्ड' पुराण में गढ़वाल को केदारखण्ड और 'मानसखण्ड' में कुमाऊँ को मानसखण्ड कहा गया है। समस्त प्राचीन साहित्य में गढ़वाल – कुमाऊँ को सम्मिलित रुप में 'उत्तराखण्ड' कहा गया है।
- जोशीमठ का प्राचीन शुद्ध नाम ज्योतिर्मठ है।
- आदि शंकराचार्य ने सन् ८२० ई. में केदारनाथ तीर्थ में देह त्याग की।
- चाँदपुर शिलालेख के अनुसार ८८८ ई. में चाँदपुरगढ़ में गढ़वाल में पँवार वंश की स्थापना हुई।
- पूर्वकाल में गढ़वाल में ५२ से भी अधिक गढ़ो की प्रधानता के कारण इस क्षेत्र को 'गढ़वाल' कहा जाने लगा। १५१५ ई. के आसपास 'गढ़वाल' नाम अस्तित्व में आया।
- छठी – सातवीं शती ईसवी में उत्तराखण्ड की सीमाओं में सबसे बड़ा राज्य 'ब्रह्मपुर' था।
- लगभग सन् १००० में कार्तिकेयपुर राजाओं ने कार्तिकेयपुर से अपनी राजधानी हटाकर बैजनाथ (कुमाऊँ) स्थानान्तरीत की। कुछ ही काल पश्चात् यह राजवंश समाप्त हो गया।
- बैजनाथ में कत्यूरी वंश के अन्तिम राजा के सन् १२७९ तक राज्य करने का उल्लेख परम्परागत इतिहास में मिलता है। उसके बाद कत्यूरी कई शाखाओं में बँट गये।

- कार्तिकेयवंश के पश्चात्, कुमाऊँ में कातियुर अथवा कत्यूर वंश का उदय हुआ। रणचूलाहाट के कत्यूरियों के निर्बल होने के पश्चात् कालांतर में सारे कुमाऊँ में चन्द्रवंश का अधिकार हो गया।
- सन् १७९० में गोरखा सेना ने कुमाऊँ पर अधिकार किया।
- १४ मई, १८०४ को गढ़वाल नरेश प्रद्युम्नशाह देहरादून के खुड़बुड़ा नामक स्थान में गोरखा सेना के हाथों वीरगतिं को प्राप्त हुए और गढ़वाल पर गोरखाओं का शासन स्थापित हो गया।
- २७ अप्रैल, १८१५ को गढ़वाल – कुमाऊँ पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया।
- सम्पूर्ण कुमाऊँ तथा आधे पूर्वी गढ़वाल पर अधिकार करने के पश्चात् अंग्रेजों ने ३ मई, १८१५ में कर्नल एडवर्ड गार्डनर को यहाँ पर प्रथम कमिश्नर तथा एजेन्ट गवर्नर जनरल नियुक्त किया।)[७]
- [८](महाभारत एवं पुराणों में केदारखण्ड (गढ़वाल) को स्वर्गभूमि कहा गया है।
- हरिद्वार का प्राचीन नाम मायावती अथवा गंगाद्वार है।
- धर्मग्रन्थों में देवप्रयाग का नाम सुदर्शन क्षेत्र या देवतीर्थ है।
- गोपेश्वर का प्राचीन नाम गोस्थल है।
- बैजनाथ का प्राचीन नाम वैद्यनाथ है।
- कुछ विद्धानों के अनुसार ऋग्वेद में वर्णित यमुना नदी के किनारे आर्यो एवं दासों का युद्ध हुआ था।
- अलकनन्दा के तट पर यक्षों के राजा कुबेर की राजधानी 'अलकापुरी' थी।

- जनश्रुतियों के अनुसार, वेद गढ़वाल के वैदिनी क्षेत्र में लिखे गये थे।
- प्राचीन पालि साहित्य में गढ़वाल को 'हिमवन्त' कहा गया है।
- रुद्रप्रयाग का प्राचीन नाम पुनाड़ है । पुनाड़ गाँव रूद्रप्रयाग के नजदीक आज भी बसा है।
- ह्वेनसांग के अनुसार मोरध्वज का नाम मो – यू – लो था।
- वर्तमान बैजनाथ, बागेश्वर, गरुड़ घाटी तथा सोमेश्वर का क्षेत्र ही मध्यकालीन कत्यूरी राज्य का मूल क्षेत्र था।
- ऋषिकेश का प्राचीन नाम कुब्जाम्रक या हृषीकेश है।
- गढ़वाल – कुमाऊँ का प्राचीन नाम कर्तृपुर और ब्रह्मपुर था।
- गढ़वाल को 'बदरिकाश्रम' तथा 'केदारमण्डल' भी कहा जाता था।
- सन् ६०६ में मौखरि वंश के गृहवर्मन (सर्ववर्मन का पौत्र) के वध के बाद सम्राट हर्ष ने कुमाऊँ – गढ़वाल को अपने अधिकार में ले लिया।
- उत्तराखण्ड का प्रथम ऐतिहासिक राजवंश 'कार्तिकेयपुर राजवंश' माना जाता है।
- पँवारवंश में महाराजा अजयपाल तथा चंद्रवंश में गरुड़ ज्ञानचंद प्रतापी राजा हुए।
- सन् १३९८ में वत्सराज (वच्छराज) नामक गढ़वाल के राजा ने तैमूरलंग को मोहनघाट पर रोक दिया। उसी समय रतनसेन नामक एक अन्य गढ़वाली राजा ने भी तैमूरलंग को कालेसर के पास रोका था।

- सन् १७९० – १८१५ तक कुमाऊँ तथा सन् १८०४ – १८१५ तक गढ़वाल पर गोरखों का आधिपत्य रहा। गोरखाओं का शासन बहुत क्रूर रहा। गोरखों का राज्य 'गोरख्याणी' के नाम से कुख्यात रहा है।

- सन् १८१५ की सिंगोली संधि के अनुसार, काली से अलकनन्दा के पूर्वी तट का भाग पूर्णतया ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधीन हो गया। अर्थात् गढ़वाल का पश्चिमी भाग (टिहरी गढ़वाल) पँवार वंश के आधिपत्य में आया और पूर्वी भाग (पौड़ी गढ़वाल) अंग्रेजो के अधीन हो गया।

- ब्रिटिश – गढ़वाल की राजधानी श्रीनगर थी। इसमें अल्मोड़ा भी मिलाया गया।

- सन् १८३९ में अल्मोड़ा, गढ़वाल से अलग किया गया और सन् १८४० में श्रीनगर से राजधानी पौड़ी स्थानन्तरित कर दी गई।

- अंग्रेजी शासन के आरम्भ में अलकनन्दा के पूर्वी क्षेत्र को 'कुमाऊँ मण्डल' के रुप में स्थापित किया गया। सन् १९३९ तक ब्रिटिश गढ़वाल, कुमाऊँ के एक परगने के रूप में और उसके बार एक जनपद के रूप में विद्यमान रहा।

- सन् १८५४ में नैनीताल को कुमाऊँ मण्डल का मुख्यालय बनाया गया। १८५४ से १८९० तक कुमाऊँ मण्डल में दो जनपद थे। १८९० में अल्मौड़ा जनपद को अल्मोड़ा व नैनीताल दो जनपदों मे बाँटा गया। १८९० से १९४९ तक कुमाऊँ मण्डल में नैनीताल, अल्मौडा एवं गढ़वाल तीन जनपद थे।

- २४ फरवरी, १९६० तक गढ़वाल दो जनपदों पौड़ी एवं टिहरी में बँटा था और इन दोनों की सीमाएँ अलकनन्दा द्वारा विभक्त थी।

- २४ फरवरी, १९६० मे अल्मौड़ा, टिहरी गढ़वाल और पौड़ी गढ़वाल दो – दो जनपदों में विभक्त हुए। पिथौरागढ़ (अल्मौडा से), उत्तरकाशी (टिहरी गढ़वाल से), चमोली (पौडी गढ़वाल से)। इस प्रकार नैनीताल को मिलाकर कुल आठ जनपद बने।

- सन् १९६८ मे कुमाऊँ – गढ़वाल के ८ जनपदों की प्रशासनिक व्यवस्था के लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पर्वतीय विकास विभाग का गठन किया गया।

- १ जनवरी, १९७० में चमोली, पौड़ी गढ़वाल, टिहरी गढ़वाल व उत्तरकाशी जनपदों को मिलाकर 'गढ़वाल मण्डल' बनाया गया।

- सन् १९७५ में 'देहरादून' को मेरठ मण्डल से अलग कर इसे गढ़वाल मण्डल में शामिल किया। क्योकिं देहरादून पूर्व काल से ही गढ़वाल का अंग था।

- १३ मई, १९७२ को चम्पावत तहसील को पिथौरागढ़ जनपद में मिलाया गया और १५ सितम्बर १९९७ को चम्पावत अलग जनपद बना।

- सन् १९९५ में नैनीताल जनपद को दो भागों में विभक्त कर ऊधमसिंह नगर जनपद बनाया गया।

- १५ सित्मबर, १९९७ को पिथौरागढ़ जनपद से 'चम्पावत जनपद', अल्मोड़ा जनपद से 'बागेश्वर जनपद' तथा चमोली जनपद से विभक्त कर 'रुद्रप्रयाग जनपद' बनाये गये।

- ९ नवम्बर, २००० को नवगठित राज्य की अंतरिम सरकार ने शपथ ली।

- २ मार्च, २००२ को राज्य की प्रथम 'निर्वाचित सरकार' ने शपथ ली जिसके मुख्यमंत्री पं. नारायणदत्त तिवारी बने।)[८]

संदर्भ सूची

१ कुमाऊँ के मेले – डॉ दिनेश चद्र बलूनी – पृ.सं. २५१

२ कुमाऊँ का इतिहास – बद्रीदत्त पाण्डे – पृ.सं ५९२

३. विनसर उत्तरांचल इयर बुक – २००६ – लोकेश नवानी – पृ.सं. ३६५

४. वही .. .. पृ.सं. २९४

५ वही . . . पृ सं. ४०९, ४१०

६. वही . . . . पृ.स ४१३

७ वही .. . पृ स २९२, २९३

८ वही . .. .. . पृ सं ३०२, ३०३